IJCRT.ORG ISSN : 2320-2882

INTERNATIONAL JOURNAL OF CREATIVE RESEARCH THOUGHTS (IJCRT)

An International Open Access, Peer-reviewed, Refereed Journal

निराला के गद्य साहित्य की भाषा एवं शिल्प

प्रियंका *

शोधार्थी , हिंदी विभाग, महाराजा गंगा सिंह विश्वविद्यालय, बीकानेर

हिन्दी के यशस्वी महाकवि सूर्यकान्त त्रिपाठी *'निराला'* का अवतरण हिन्दी साहित्य के लिए विशेष अवदान माना जाता है । *''अपने उपनाम के समान ही निराला का सम्पूर्ण व्यक्तित्व अद्‌भूत प्रतिभाओं का निराला सम्मिश्रण था । वे कबीर के समान रुढ़ियों पर निर्मम प्रहार करने की अक्खड़ता लेकर, तुलसी के विशाल अध्ययन एवं कलाकार की सूक्ष्मदृष्टि से समन्वित होकर, सूर की निश्छल तन्मयता एवं भावुकता लेकर, रवीन्द्र की मनस्विता तथा बिहारी का कला–सौन्दर्य अपनाकर अवतरित हुए थे ।''*[1]

निराला के गद्य साहित्य का अपना एक सहज रूप है । जितने अलंकार बोलचाल की भाषा में आते हैं उतने ही अलंकार उनके गद्य साहित्य में है । स्वर का क्रमशः चढ़ते जाना, फिर अचानक उतार और स्तंभित–सा विराम पर ठहरना, यह निराला के उस गद्य की विशेषता है जिसमें आवेश में बोलते हुए वह कला की बात भूल जाते थे। उनके सहजभाव में बड़ी ऊर्जा है, उनके हृदय का अपार सौन्दर्य भी । निराला का गद्य बहुत सीधे और जोरदार ढंग से बात कहता है । उसमें जरूरत से ज्यादा अर्थवक्रता है, यह अर्थवक्रता उनकी संस्कृत–निष्ठ भाषा में है और 'गुलाबी उर्दू' में भी है । चतुरी चमार और बिल्लेसुर बकरिहा का गद्य उनकी बोलचाल की अवधी से मिलता–जुलता है । खड़ी बोली लिखते हुए भी निराला उसे अवधी स्तर पर ले जाते हैं।

''सपना फलियायगा, निगाह ताड़ते हुए, चोर की कठैली भी आँगन में रह जाय, कंडे की आग परचाकर, ताँबे की दंतखोदनी उठाकर दाँत खरिका किए, भद्रा के जैसे मारे इधर–उधर घूमते हो, बिल्लेसुर को बड़ी कायल हुई, अब तो मुझे माफी दीजिए, ब्याह जरूर गैतल है, तुम्हारी (लड़की) में मखमल का झब्बा लगा है, चोर बड़े लागन हैं, यह कारन करके रोना कैसा सास ने अधाकर साँस ली, हमारी बिटिया की तरह गोरी नहीं भलेमानुस है, मुझे तींगुर नहीं लगता, लोग सिहाने लगे, रूपये के नाम से, बिल्लेसुर कुनमुनाये, एक पंख लगाकर ब्याह पक्का करने लगे; बंगालिन की तरह चटककर बोली; (कोई) अपनी चितकौड़ी कौड़ी को पट होते देखता है; हंडी में मुस्का बांधकर;जुते तेलवाये रखे थे, कोलिया के भीतर अधगिरा मकान था, बाजदार, डोम

[1] साहित्यिक निबंध : पृष्ठ संख्या 355

और परजा बिल्लेसुर को घेरते रहे; कंठा, मोहनमाला, बजुल्ला, पहुँची, मँगनी माँग लाये ।''[2] इस तरह के प्रयोग बिल्लेसुर बकरिहा के गद्य में रचे हुए हैं । निराला इससे न केवल ग्रामीण परिवेश तैयार करते हैं, वरन् हिन्दी भाषा की शक्ति के अटूट स्त्रोत–जनपदीय बोलियों की ओर भी संकेत करते हैं।

निराला जब शहरी नफासत का भाव पैदा करना चाहते हैं, तब उर्दू शब्दों का प्रयोग अधिक करते हैं । रामविलास शर्मा के अनुसार, निराला निरूपमा का आरम्भ इस वाक्य से शुरू करते हैं – *''लखनऊ में शिद्दत की गरमी पड़ रही है ।''*[3] किन्तु इस शिद्दत के बाद तरू–लता–गुल्म, पृथ्वी, ज्वाला आदि शब्द आकर नफासत साँचा तोड़ देते हैं । चमेली के अन्त में उन्होनें नोट लिखा, *''चमेली नामक अप्रकाशित उपन्यास से, जिसकी एक विशेषता ठेठ हिन्दुस्तानी भाषा है।''*[4] जैसी भाषा को उस समय लोग हिन्दुस्तानी कहते थे, वैसी भाषा यह नहीं है । निराला कठिन तत्सम् शब्दावली का प्रयोग छोड़ते हुए गद्य को बोलचाल की अवधी के नजदीक लाने का प्रयास करते हैं । *''उतरता बैसाखा खलिहान में गेहूँ, जव, चना, सरसों और अरहर की रासें लगी हुई हैं । गाँव के लोग मँडनी कर रहे हैं । कोई–कोई किसान, चमार, चमारिन की मदद से, माड़ी हुई रास ओसा रहे है । धीमे–धीमे पछियाव चल रहा है ।''*[5] चमेली के इस गद्य पर अवधी की वैसी ही छाप है जैसी बिल्लेसुर बकरिहा के गद्य पर ।

निराला ने कोई कहानी या लेख 'उर्दू' में नहीं लिखा जैसे उन्होनें 'उर्दू' में गजलें लिखी हैं । उर्दू शब्द वह शैली भेद के लिए या गद्य में किसी विशेष कारण से इस्तेमाल करते हैं, वह शुद्धता के पक्षपाती न थे, उनकी भाषा का ठाठ वैसा ही रहता है जैसा अन्यत्र उनकी हिन्दी का । *''चतुरी चमार डाकखाना चमियानी, मौजा गढ़ाकोला, जिला उन्नाव का एक कदीमी बाशिंदा है ।''*[6] इसका आरम्भ इस तरह किया गया है जैसे थाने में रिपोर्ट लिखा रहे हो या कचहरी में ब्यान दे रहे हो । चतुरी का जीवन, उसकी भाषा कचहरी के जीवन और भाषा से बिल्कुल अलग है । प्रारम्भिक वाक्य की शैली में व्यंग्य अन्तर्निहीत है । शेष गद्य में मकान, फासला, पुश्तैनी, रिश्ता, देहात, मजबूत, तारीफ, हफ्ता, चुस्त, वजन, इर्द–गिर्द, वगैरह, नज़दीक, साए, रोज, दरवाजा, शुमार करना आदि बोलचाल के 'उर्दू' शब्दों के साथ निराला पूर्वज, शुद्धाशुद्ध इच्छा, साधारण, प्रोत्साहन, श्रद्धा साहित्यिक, मर्मज्ञ आदि 'हिन्दी' शब्दों का प्रयोग करते हैं । इनके साथ पिछवाड़े, पनाले, बनैले, ठूंठियाँ, रूँधवाए, चौगड़े, ढोर, मड़नी आदि 'भदेस' शब्द गद्य में लोकरस मिलाते है ।

[2] निराला की साहित्य साधना –2 :– रामविलास शर्मा : पृष्ठ संख्या 501
[3] निराला की साहित्य साधना –2 :– रामविलास शर्मा : पृष्ठ संख्या 502
[4] निराला की साहित्य साधना –2 :– रामविलास शर्मा : पृष्ठ संख्या 502
[5] निराला की साहित्य साधना –2 :– रामविलास शर्मा : पृष्ठ संख्या 502
[6] निराला की साहित्य साधना –2 :– रामविलास शर्मा : पृष्ठ संख्या 502

निराला की कविता और गद्य दोनों में भाषा ही प्रमुख समस्या थी । खड़ी बोली जितनी उन्हें प्रिय थी, उतनी ही उन्हें परेशान भी करती थी । सूर की तरह ब्रज–भाषा लिखो, रवीन्द्र की तरह बांगला लिखो, किन्तु हिन्दी किस की तरह लिखो ?

रामविलास शर्मा के अनुसार, *'स्वकीया'* निबन्ध में उन्होनें लिखा था, *''किसी कवि का एक कक्ति पढ़ा था । उसमें किसी रईस से इनाम में मिले घोड़े की तारीफ है । अंतिम चरण है – 'चलना हराम इसे उठना कसम है ।' बिल्कुल यही दशा खड़ी बोली की है ।''*[7] (माधुरी, अगस्त 35) यहाँ उनका असंतोष प्रकट हुआ है ।

इस निबन्ध में निराला लिखते हैं कि पहले खड़ी बोली नाम सुनकर औरों की तरह वे भी समझे थे कि यह खड़ी बोली खड़ी हो गयी पर नजदीक से देखने पर निराशा हुई । इससे यह नहीं मानना चाहिए कि निराला किसी समय खड़ी बोली पर मुग्ध थे, बाद में विरक्ति हो गई ।

वास्तव में निराला के गद्य की भाषा ठोस व श्रेष्ठ है । भाषा के साथ–साथ निराला ने गद्य में अनेक शैलियों का भी प्रयोग किया है । पद्य में जैसे उन्होनें अनेक काव्य रूप रचे हैं, वैसे ही गद्य में। जैसे पद्य में बहुत जगह उनका शब्द चयन तत्सम् बहुत है, वैसे ही गद्य में; जैसे पद्य में सरल शब्दावली के रहते भी दुरूहता उत्पन्न होती है, वैसे ही गद्य में ।

निराला की छायावादी शैली अलंकारों के नुपूर बजाती हुई उनके कल्पना–लोक की अप्सरा के समान गद्य में अवतरित् होती है । कैसी थी लाहौर नगरी जहाँ कॉंग्रेस का चवालीसवाँ अधिवेशन हुआ ? अगणित श्वेत तम्बुओं की शृंखलित पंक्तियों से दिन में शुभ्रवसना देवी की भांति, असंख्य प्रदीपों की उज्ज्वल क्रांति से रात्रि में परी की तरह जगमगाती हुई, सोने के सहस्त्रों अलंकारों से शोभित, ग्रीवा झुकाए हुए, रूप की राजहंसी, हरे पत्रों की रेशमी साड़ी पहने हुए उर्वशी अंधकार–केशों को खोले हुए ज्योतिर्मयी स्वतंत्रता, मस्तक पर बालों से गुँथा चमकता हुआ हीरा, आकाश पर दृप्त उड़ती हुई जातीय पताका । (सुधा, फरवरी, 1930; संपा. टि.–3)

कैसी थी कुमारी प्रभावती जो दुर्ग से उतरकर गंगा की धारा पर कुमार से मिलने आई ? सर्वेश्वर्यमयी स्वर्ग की लक्ष्मी, मौन हिमाद्री किरण –विच्छुरितच्छवि गौरी, मौन ज्योत्स्ना रागिनी की साकार प्रतिमा, सोपान–सोपान पर सुरंजिता, शिंजित चरण उतरती हुई, प्रतिपदक्षेप–झंकार कम्प–कमल पर इत्यादि ।

निराला के गद्य में उनके पद्य की तरह सानुप्रास लड़ियाँ नहीं हैं । निराला अपने गद्य में पाठकों से सीधे बातें करते हुए अपनी वक्तृत्वकला से उसे प्रभावित करते हैं, तब सानुप्रास लड़ियों से भाषा को कवित्वपूर्ण बनाना उनके लिए आवश्यक नहीं होता । निराला गद्य में रूपक पद्य की तरह ही बाँधते हैं । अकसर वृक्ष, कली और गन्ध वाले रूपक गद्य–पद्य में सामान्य हैं । छायालोक की अप्सराओं, सोलह साल की अधखुली कलियों के सौन्दर्य वर्णन में उनके गद्य–पद्य के अलंकार–आभूषण एक से हैं । गद्य में भी निराला पद्य की तरह ख्याल की गिरह लगाते है जिसे खेलने में पाठक को काफी परिश्रम करना पड़ता है ।

[7] निराला की साहित्य साधना –2 :– रामविलास शर्मा : पृष्ठ संख्या 491

निबन्ध *'एक बात'* में शीर्षक में बड़ी सादगी है, पाठक को लगता है कि निबन्ध की भाषा सरल होगी । लेकिन रामविलास शर्मा जी कहते हैं कि निबन्ध कुछ इस तरह शुरू होता है *''हिन्दी की हितैषणा की गाँठ में गठिए का असर उसके सेवकों के तरदिमाग के कारण बढ़ता ही जा रहा है ।''*[8] (प्रबन्ध पद्म, पृ० 45) हितैषणा की गाँठ पाठक अभी खोल न पाया था, तरदिमाग से गठिए का असर गाँठ में कैसे पहुँचा, यह गुत्थी सुलझा न पाया था कि रामविलास शर्मा जी के कहने अनुसार निराला ने दूसरे वाक्य में नया रूपक बाँधा, *''भारतीय का ज्योतिर्मय अर्थविश्व की तमाम विभूतियों को भास्वर करता रहा, पर हिन्दी के हित–चिंतकों के प्रस्तर–हृदय के भीतर, स्त्रोतस्वती ही के हृदय के रोड़े की तरह, आलोकस्निग्धता कुछ भी न पहुँची ।''*[9] (उप० पृ० 44) *'देवी'*, *'चतुरी चमार'*, *'कुल्लीभाट'*, *'बिल्लेसुर बकरिहा'* और *'चमेली'* में निराला द्वारा जनजीवन का इतना अच्छा चित्रण किया गया है कि उसके आगे अप्सरा, अलका, प्रभावती लिली आदि कहानियों का छायावादी सौन्दर्य निस्तेज है । *''अर्थ''* कहानी में निराला ने कला का अनोखा चमत्कार प्रकट किया है । कला का यह चमत्कार व्यंग्य–मिश्रित करूणा की अन्तर्धारा व कथा कहने वाले की निस्संग दृष्टि द्वारा प्रकट होता है । धार्मिक आस्थाओं को लेकर भक्त के मन का द्वन्द्व, उसकी पत्नी का असीम प्यार, भैयाचारों के षड़यन्त्र, उनकी ठगविद्या और चित्रकूट में रात को पहाड़ की चढ़ाई आदि बातों में भी कला का चमत्कार प्रकट होता है। इसके अतिरिक्त 'अर्थ' कहानी में सामाजिक वातावरण, प्राकृतिक परिवेश और मानसिक अन्तर्द्वन्द्व का निराला ने ऐसा सफल चित्रण किया है जो निराला के गद्य में अन्यत्र दुर्लभ है । रामविलास शर्मा जी ने कहा है कि निराला *'अप्सरा'* उपन्यास में चन्दन की माँ के द्वारा यथार्थवाद की भूमि को यों प्रकट करते हैं, *''देखो न भैया, न जाने कब जीव निकल जाय, करारे का रूख कौन ठिकाना, चाहे जब भहराय के बैठ जाय.....''*[10] (पृ० 218) 'अप्सरा' उपन्यास में यथार्थवाद की यहाँ झलक भर मिलती है। यथार्थवाद पर छायालोक का घना कुहरा फैला हुआ है । देवी, चतुरी चमार, कुल्लीभाट और बिल्लेसुर बकरिहा आदि रचनाएँ गद्य–लेखन में, कथा–रचना में यथार्थवादी साहित्य के विकास में नया चरण है । 'देवी' और 'चतुरी चमार' कहानी एक तरफ रेखाचित्र है, दूसरी तरफ संस्मरण। इनके साथ ललित–निबन्ध रचना कौशल है, रेखाचित्र और संस्मरण के साथ उसके बिना भी रोचक बाते सुनाने की कला ।

निराला जैसे निरलंकार पद्य कम लिखते हैं, वैसे ही उनका गद्य है । अलंकार वे कहीं छायावादी सौन्दर्य की सजावट के लिए प्रयुक्त करते हैं और कहीं हास्य और विनोद के लिए । पौराणिक गाथाओं से वे काफी अलंकरण सामग्री बटोर लेते हैं जैसे *''पंतजी और पल्लव''* के स्वर्णलंका वाले रूपक में । *''सुकूल की बीवी''* में वह स्वयं समुद्र–मंथन करते हैं, गरलपान करते हैं महादेव बाबू । महादेव के श्लेष से मन प्रसन्न होता हैं । रामविलास शर्मा जी कहते हैं अलका में *''जब से मुरलीधर पैत्रिक सिंहासन पर अपने नाम की मुरली धारण कर बैठे, बराबर सनातन प्रथा के अनुसार सरकारी अफसरों की सोहावनी सोहनी*

[8] निराला की साहित्य साधना –2 :– रामविलास शर्मा : पृष्ठ संख्या 498
[9] निराला की साहित्य साधना –2 :– रामविलास शर्मा : पृष्ठ संख्या 498
[10] निराला की साहित्य साधना –2 :– रामविलास शर्मा : पृष्ठ संख्या 464

छोड़ते जा रहे हैं ।''[11] (पृ० 19) महादेव बाबू के लिए जैसे गरलपान स्वाभाविक है, वैसे ही मुरलीधर के लिए मुरली बजाना । यहाँ पौराणिक गाथा भी है और श्लेष भी ।

निराला का गद्य एक ओर वाद–विवाद में जूझने वाले कुशल तार्किक और व्यंग्य लेखक का गद्य है, दूसरी ओर उसमें कवि सुलभ चित्रमयता, भाव–गाम्भीर्यता के भी दर्शन होते हैं । चित्रमयता, अर्थवक्रता और भाव–सघनता के कारण निराला के गद्य का ऊँचा स्थान है ।

निराला यह भावगाम्भीर्य ओर भी कई तरीकों से देवी और बिल्लेसुर बकरिहा जेसी रचनाओं में पैदा करते हैं । *''और चूँकि मैं साहित्य को नरक से स्वर्ग बना रहा था इसलिए मेरी दुनिया भी मुझसे दूर होती गई; अब मौत से जैसे दूसरी दुनिया में जाकर मैं उसे लाश की तरह देखता होऊँ ।''*[12]

निराला ने इस वाक्य के प्रबल विरोधाभास द्वारा जीवन और साहित्य के अन्तर्विरोध को व्यक्त किया है । साहित्य को नरक से स्वर्ग बनाने का उल्टा फल कि मेरी दुनिया मुझसे दूर होती गई–एक विरोधाभास यह । दूसरा विरोधाभास : निराला मौत के बाद दूसरी दुनिया में पहुँच गए लेकिन जो लाश दिखाई दे रही है, वह इस दुनिया की है। इस वाक्य में जितनी तीव्र पीड़ा है उतनी ही तीव्र जुगुप्सा है । तुम सब मुर्दे हो; मैं तुम से दूर ही रहूँ, तो अच्छा–निराला कहते हैं, जैसे निराला काव्य में अर्थवक्रता पैदा करते हैं, विरोधी भावों को एक ही ताने–बाने में गूँथ देते हैं, भावों के साथ तीक्ष्ण विवेक का परिचय देते हैं, वैसे ही यहाँ गद्य में ।

'भक्त और भगवान' के प्रारम्भिक वाक्यों में बड़ा रंगीन गद्य है व कोमल भाव जगाने वाला व्यंग्य है किन्तु कटु नहीं, करूणा मिश्रित। रूपक है लेकिन उसे कठिन नहीं बनने दिया गया ।

''भक्त साधारण पिता का पुत्र था । (पिता साधारण थे, पुत्र असाधारण था–यह ध्वनि) सारा सांसारिक ताप पिता के पेड़ पर था, उस पर छाँह । (पिता ने साधारण होते हुए भी बड़े लाड़–प्यार से बेटे को जीवन में किसी अभाव से दुखी न होने दिया । अबः ते हिनो दिवसा गताः !) इसी तरह दिन पार हो रहे थे । उसी छाँह के छिद्रों से रश्मियों के रंग, हवा से फूलों की रेणु–मिश्रित गन्ध, जगह–जगह ज्योतिर्मय जल में नहाई भिन्न–भिन्न रूपों की प्रकृति को देखता रहता था । (सविकल्प समाधि में योगी को अथवा कल्पना में प्रतिभाशाली कवि को जो भव्य दृश्य दिखाई देते हैं, वे भक्त को भी दिखाई देते थे । इसके बाद व्यंग्य।) स्वभावतः जगत् के करण–कारण भगवान् पर उसकी भावना बँध गई ।''[13]

निराला इस तरह एक वाक्य से दूसरे वाक्य तक अर्थ–प्रसार करते हैं और पूरे पैराग्राफ में गहरे अर्थ की ध्वनि गूँजती है ।

निराला समय–समय पर नये–नये प्रयोग करने वाले साहित्यकार थे । उन्होनें गद्य–लेखन में भी नये–नये प्रयोग किए । उनके द्वारा किए गये नये–नये प्रयोगों ने ही गद्य–लेखन को नई–नई ऊँचाईयों तक पहुँचाया । इनमें एक महत्त्वपूर्ण प्रयोग हैं

[11] निराला की साहित्य साधना –2 :– रामविलास शर्मा : पृष्ठ संख्या 499
[12] निराला की साहित्य साधना –2 :– रामविलास शर्मा : पृष्ठ संख्या 499
[13] निराला की साहित्य साधना –2 :– रामविलास शर्मा : पृष्ठ संख्या 500

'वर्तमान धर्म' । इसमें उन्होनें विचारों को जोड़ने वाली कड़ियाँ बहुत जगह तोड़ दी है, आकस्मिक ढंग से एक विचार से दूसरे तक पहुँचते हैं । गंभीर दार्शनिक विवेचन के साथ वह रूपकों के बाह्य अर्थ का हास्यास्पद रूप मिला देते हैं । हास्य के इसी स्तर पर वह शब्दों की ध्वनि से खेलते हुए एक शब्द के सहारे दूसरे शब्द–दूसरे विचार तक पहुँच जाते हैं । हास्य और तीक्ष्ण दार्शनिक तर्कों का ऐसा मेल हिन्दी के दूसरे निबन्ध में नहीं । इस मेल में एक आन्तरिक संगति हैं । वह यह कि निराला जिस दार्शनिक पक्ष का समर्थन कर रहे हैं, वह रूपकों के बाह्य अर्थ को स्वीकार नहीं करता।

कविता, उपन्यास, नाटक–निराला के लिए इनकी चित्रण–कलाएँ अलग–अलग हैं । निराला कहते हैं कि कला भावोच्छ्वास में नहीं है, दार्शनिक विचारों का अम्बार लगा देने में नहीं है, शब्द–चयन में नहीं है, रस–ध्वनि अलंकार में नहीं है, कला है रचना में जिसके अन्तर्गत ये सब हैं ।

राजनीति और दर्शन की तरह निराला ने साहित्य संबंधी विचारधारा के क्षेत्र में जो संघर्ष किया, उसका महत्त्व न केवल उनके युग के लिए था, वरन् आज के लिए भी है । निराला की साहित्य संबंधी विचारधारा अन्तर्विरोधों से मुक्त नहीं है किन्तु उसके प्रवाह की मूल दिशा का पता लगाना कठिन नहीं है । यह प्रवाह घनिष्ठ रूप से उनके काव्य–सृजन और कथा लेखन से सम्बद्ध है ।

वास्तव में निराला ने अपने गद्य में भाषा और शैली का उत्तम रूप दिखाया है जिसके कारण उनका गद्य हिन्दी साहित्य में अपना श्रेष्ठ स्थान रखता है ।

सन्दर्भ ग्रंथ सूची

अनामिका (प्रथम) : बालकृष्ण प्रेस, 23, शंकरघोस लेन, कलकत्ता, 1923

परिमल : गंगा पुस्तकमाला कार्यालय, लखनऊ, 1929

गीतिका : *भारती भंडार, लीडर प्रेस, इलाहबाद, 1936*

अनामिका (द्वितीय) : भारती भंडार, लीडर प्रेस, इलाहबाद, 1939

आराधना : साहित्यकार संसद, प्रयाग, 1953

गीतगुंज : हिन्दी प्रचारक पुस्तकालय, बनारस, 1954

सान्ध्यकाकली : वसुमती, 38 ज़ीरो रोड़, इलाहबाद, 1969

कहानी संग्रह

लिली : गंगा पुस्तकमाला कार्यालय, लखनऊ, 1934

सखी : सरस्वती पुस्तक भण्डार, लखनऊ, 1935

उपन्यास

अप्सरा : गंगा पुस्तकमाला कार्यालय, लखनऊ, 1931

अलका : गंगा पुस्तकमाला कार्यालय, लखनऊ, 1933

प्रभावती : सरस्वती पुस्तक भण्डार, लखनऊ, 1936

निरूपमा : भारती भण्डार, लीडर प्रेस, इलाहबाद, 1936

कुल्लीभाट : गंगा पुस्तकमाला कार्यालय, लखनऊ, 1939

आलोचनात्मक चिन्तन/निबन्ध

रवीन्द्र कविता कानून : (परिवर्धित संस्करण) : हिन्दी प्रचारक पुस्तकालय, बनारस, 1954

प्रबन्ध पद्म : गंगा पुस्तकमाला कार्यालय, लखनऊ, 1934

प्रबन्ध प्रतिमा : भारती भण्डार, प्रयाग, 1940

चाबुक : कला मंदिर, इलाहबाद, 1942